रिटेल बूम और मॉडर्नाइजेशन के रोमांच से अभिभूत डेवलपरों ने देशभर को मॉल्स से सजाने की घोषणा कर डाली। लेकिन आधे से ज्यादा दशक बीत जाने के बाद भी घोषित 700 मॉल्स में से सिर्फ 176 ही ऑपरेशनल हुए हैं। और इनमें भी गिनती के सफल कहे जा सकते हैं। रिटेल और रियल एस्टेट डेवलपमेंट मामलों में महारथी सुशील डुंगरवाल का मानना है कि मॉल की सफलता का मंत्र उसकी प्लानिंग और मैनेजमेंट में छिपा होता है। विभिन्न रिटेल फॉर्मेटों के लिए सफलतापूर्वक काम कर चुके डुंगरवाल को 23 वर्षों का लंबा अनुभव प्राप्त है। वर्तमान में वे बियोंड स्क्वॉयरफीट एडवाइजरी नामक संस्था के फाउंडर व चीफ मॉल मैकेनिक हैं।

प्लानिंग में छिपा है सफलता का मंत्र

सुशील डुंगरवाल, फाउंडर व चीफ मॉल मैकेनिक, बियोंड स्क्वॉयरफीट एडवाइज़री प्रा. लि.

ज्यादा वक्त नहीं बीता है जब प्लान किए गए लगभग 700 मॉल्स की बात की जाती थी। इनमें से अभी तक लगभग 170 मॉल ऑपरेशनल हैं। हालत यह है कि अधिकांश नियोजित या घोषित मॉल ड्राइंग-पेपर के खाकों से बाहर ही नहीं निकल पाए हैं। अब इन 170 ऑपरेशनल मॉल्स में से भी लगभग 12 प्रतिशत मॉल्स को ही सफल माना जा सकता है। इस तमाम स्थिति में बहुत से प्रोजेक्ट सिर्फ ढांचा बन कर ही खड़े रह गए। इन्हें अनियोजित और दिशाहीन 'स्टोरों का कलैक्शन' कहा जा सकता है, जिनका फोकस उपभोक्ताओं पर बिलकुल नहीं था।

मॉल मैनेजमेंट में कंसेप्चुअलाइजेशन, पोजिशनिंग, ज़ोनिंग, टेनेंट मिक्स, प्रमोशनल गतिविधियां तथा मॉल की मार्केटिंग जैसी प्रक्रियाएं तो शामिल हैं ही, साथ ही फैसिलिटी और फाइनेंस मैनेजमेंट जैसे मुद्दे भी शामिल रहते हैं। ये सभी तत्व सुनिश्चित करते हैं कि मॉल सही उपभोक्ताओं को लक्षित है और उसे उनका सही रिस्पांस भी मिलेगा। तभी कोई मॉल न सिर्फ सफल डेस्टिनेशन बनता है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करता है कि उसमें मौजूद रिटेलरों को अधिकतम लाभ मिले।

भारत में मॉल्स की सफलता की नीची दर ने मॉल मैनेजमेंट यानी मॉल-प्रबंधन की जरूरत और अहमियत को उभारा है। भारत में मॉल-असफलता की मुख्य वजह यह रही है कि अधिकांश डेवलपर रिटेल स्पेस की जरूरत का आकलन किए बगैर और रिटेल स्पेस में फासले की अहमियत समझे बगैर मॉल बनाने की योजना बना लेते हैं। भारत में 90 प्रतिशत से ज्यादा मॉल 'सेल मॉडल' बन कर रह गए हैं। यानी इनमें मॉल/रिटेल-स्पेस, निर्माण के दौरान ही विभिन्न इन्वेस्टरों को बेच दिया जाता है। यह टेनेंट-मिक्स नियम की अवहेलना है, नतीजतन मॉल असफल हो जाता है।

यह एक हकीकत है कि प्लानिंग स्टेज से पहले भारत में रिसर्च और संभावनाओं को परखने की कोशिश शायद ही की जाती है। डेवलपरों को स्पेस बेचने की इतनी जल्दी रहती है कि वे मॉल में रिटेलरों के मिश्रण का अच्छी तरह आकलन किए बिना ही स्पेस बेचने लगते हैं। इनकी पोजिशनिंग पहले से तय नहीं होती और कैटेगराइजेशन में किसी तरह का संतुलन नहीं होता। न ही यह तय किया जाता है कि कितना एरिया खाली छोड़ा जाएगा, और ज़ोनिंग किस तरह की होगी। यही हाल किराएदार मिश्रण यानी टेनेंट-मिक्स का रहता है। इसके अलावा अपर्याप्त पार्किंग, अपर्याप्त सेवाएं, ऊंची कैम यानी कॉमन एरिया मेनटेनेंस (CAM) दरें तथा निर्माण के बाद घटिया रख-रखाव ऐसे कारण हैं, जो शुरू से ही मॉल को असफलता के राह पर धकेलते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह होती है कि मॉल के ऑपरेशनल होते ही डेवलपर्स उससे किनारा करने लगते हैं। इन सभी खामियों और गड़बड़ियों के चलते कंस्ट्रक्शन स्टेज में ही मॉल मैनेजमेंट को शामिल करने की जरूरत उभर कर आती है। क्योंकि इससे आगे चल कर डेवलपर का न सिर्फ पैसा बचता है, बल्कि मॉल की इमेज बनने में भी मदद मिलती है।

बहरहाल, अब रिटेल कंपनियां और रिटेल रियल एस्टेट कंपनियां-दोनों ही यह समझ चुके हैं कि उनकी सफलता के लिए स्ट्रैटजी को बदलना जरूरी हो गया है। दोनों पक्ष ही सफल मॉल्स के निर्माण का अनुभव रखने वाली प्रोफेशनल एडवाइजरी कंपनियों से सलाह लेने के विचार को ज्यादा उदारतापूर्वक अपनाने लगे हैं। अब मॉल डेवलपर लीजिंग कंसलटेंटों या आइपीसी (IPCs) के पीछे नहीं भागते, बल्कि मॉल की सफलता सुनिश्चित करने के लिए प्लानिंग स्टेज से ही किसी मॉल एडवाइजर या मॉल मैकेनिक की तलाश करते नजर आते हैं।

मॉल की प्लानिंग करते समय निम्नलिखित महत्वपूर्ण तत्वों पर ध्यान देना जरूरी है:

1. **लोकेशन:** किसी दूर-दराज लोकेशन में डेवलपर के पास बड़ी जमीन होने का यह मतलब नहीं कि वो वहां मॉल बना सकता है। या सिर्फ उस लोकेशन के आसपास बड़ी रिहाइशी कॉलोनी होना ही मॉल के लिए उपयुक्त लोकेशन नहीं बन जाती। मॉल के लिए बेहतरीन लोकेशन वही होती है, जो अच्छा कैचमैंट एरिया हो और उसके आसपास दूसरे

मॉल न हों। यही नहीं, कैचमेंट एरिया में रहने वाले लोगों की खर्च करने लायक आमदनी या खर्च करने की क्षमता पर भी अच्छी रिसर्च बहुत जरूरी है। इसके अलावा मॉल की लोकेशन के बारे में फैसला लेते वक्त उस कैचमेंट एरिया के निवासियों के पास मौजूद विकल्पों की पड़ताल भी कर लेनी चाहिए।

2. **रिटेल टेनेंट मिक्स:** डेवलपरों और रिटेल कंपनियों के लिए यह एक बड़ी बाधा या समस्या है। बहुत से मॉल डेवलपर लग्ज़री मॉल बनाने को ही फैशन समझते हैं। जबकि उन्हें यह मालूम ही नहीं होता कि उस लोकेलिटी के लोग उसे अफोर्ड भी कर पाएंगे या नहीं? डेवलपर को यह बात समझनी चाहिए कि मॉल एक लोकलाइज्ड बिजनेस है, उस लोकेलिटी और आसपास के एरिए के लोगों के लिए है। इसलिए उसको मॉल की प्लानिंग करने के दौरान इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वहां रिटेल-मिक्स कैसा हो! आज की तारीख में मॉल्स को एक जिस बड़ी समस्या का सामना करना पड़ रहा है, वो है दरम्याने या मझोले दर्जे की रिटेल कंपनियों का अभाव।

3. **प्रोजेक्ट की सफलता:** लंबे समय तक डेवलपर और रिटेल कंपनियां रेंटल के मुद्दे पर टकराव की स्थिति में रही हैं। वाजिब कीमत के लिए काफी जद्दोजहद होती है। लेकिन डेवलपरों और रिटेल कंपनियों के रवैये में अब एक बदलाव देखने में आने लगा है। मसलन, मॉल डेवलपर और रिटेल कंपनियां अब उस फॉर्मूले को लागू करने लगे हैं, जो 'रेवेन्यू शेयर एग्रीमेंट' के तौर पर जाना जाता है।

ऐसी सहमति बनने से मॉल को सफल बनाने की जिम्मेदारी रिटेलर के साथ-साथ डेवलपर की भी हो जाती है। इस ट्रैंड के जोर पकड़ने के साथ ही डेवलपर उन मॉल एक्सपर्ट्स को शामिल करने के महत्व को समझने लगे हैं, जो निर्माण होने से पहले यह जानने के लिए रिसर्च करते हैं कि उस लोकेशन में मॉल की जरूरत है भी या नहीं। यही नहीं, वे किराएदारों के आने के समय तक डिजाइन संबंधी मामलों में भी और मॉल के रोजमर्रा के प्रबंधन में भी मदद करते हैं। इनमें डिजास्टर मैनेजमेंट यानी आपदा प्रबंधन भी शामिल है। एक मॉल मैकेनिक संकट की गंभीरता को कम करने और उससे निपटने के मामले में नेशनल डिजास्टर मैनेजमेंट टीम के साथ मिल कर मॉल सेक्योरिटी को इंटैग्रेट करने में मदद करता है।

> मॉल एक लोकलाइज्ड बिजनेस है, उस लोकेलिटी और आसपास के एरिए के लोगों के लिए है। इसलिए उसको मॉल की प्लानिंग करने के दौरान इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वहां रिटेल-मिक्स कैसा हो! भारत में मॉल अधिकांश तौर पर कम्यूनिटी सेंटरों या समुदाय केंद्रों की भूमिका निभाते हैं।

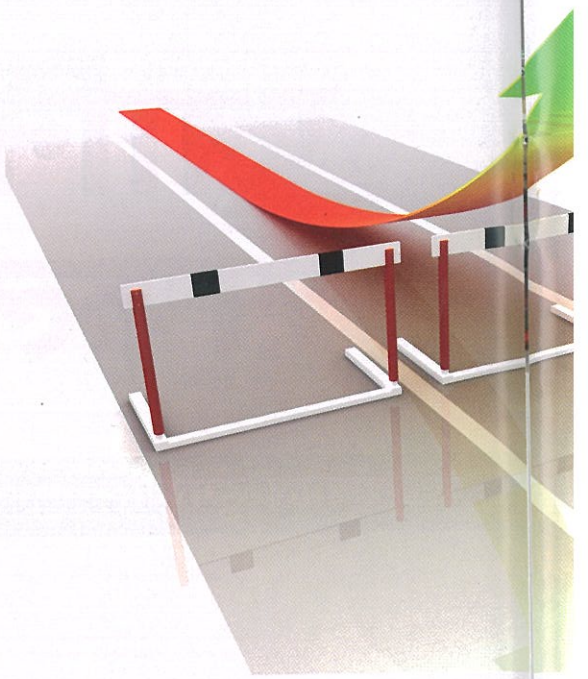

मॉल पोजिशनिंग

मूल रूप से एक मॉल को कई ज़ोनों में बांटा जा सकता है। इनमें प्रमुख हैं रिटेल, एंटरटेनमेंट, फूड कोर्ट व एट्रियम। इन सब ज़ोनों के प्रबंधन के लिए स्पेशलाइज्ड तरीके से काम करने की जरूरत होती है। मॉल मैनेजमेंट में इन सब ज़ोनों की देखरेख शामिल रहती है। लेकिन इसका प्रोसेस बिलकुल शुरुआत से ही, यानी मॉल-पोजिशनिंग से शुरू हो जाता है।

मॉल की पोजिशनिंग ही तय करती है कि डेवलपर को किस तरह आगे बढ़ना चाहिए। मिसाल के तौर पर अगर डेवलपर और मॉल मैनेजर मॉल बनने वाले एरिए की जांच-पड़ताल कर चुके हैं, और अगर वहां प्रति व्यक्ति ऊंची आय वाले लोग रहते हैं, बड़ी मात्रा में कैश-फ्लो रहता है और वहां के लोग अंतर्राष्ट्रीय रुझान वाले हैं, तो वहां पर लग्ज़री मॉल बनाना ठीक रहता है। जाहिर है ऐसी लोकेशन में मॉल की पोजिशनिंग अपने आप ही उच्च वर्ग के उपभोक्ता को केटर करेगी और उसका फोकस एक्सक्लूसिविटी पर होगा। मॉल में शामिल किए जाने वाले ब्रांडों से ले कर वहां उपलब्ध होने वाली डाइनिंग सर्विसेज, मॉल में होने वाली प्रमोशनल गतिविधियां वगैरह तमाम चीजें पोजिशनिंग के आधार पर तय की जाएंगी। प्रकाशन या प्रचार के लिए विज्ञापन

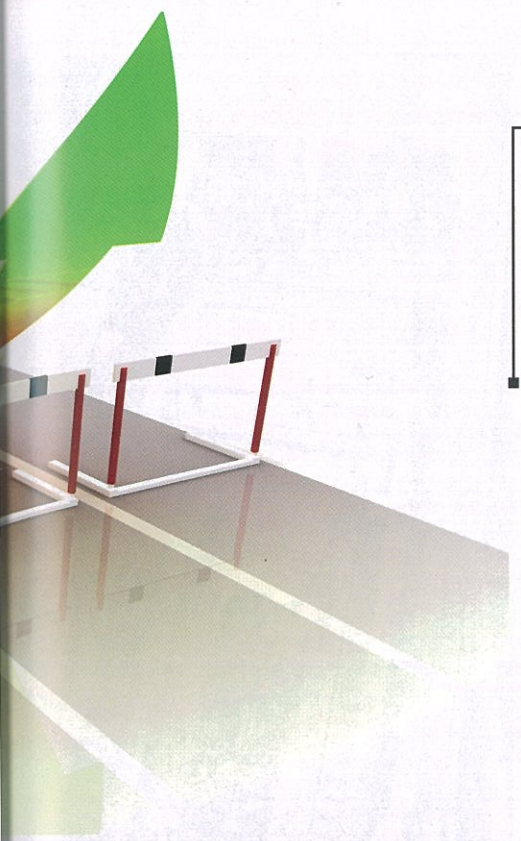

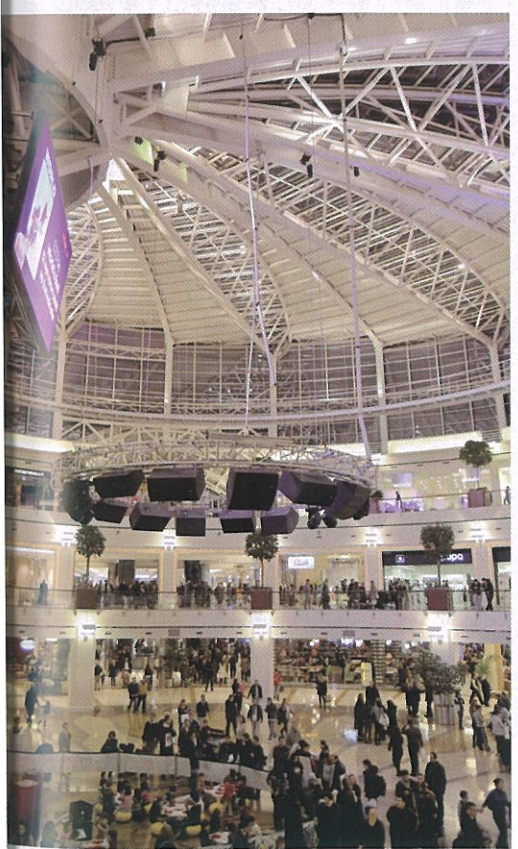

बहुत जरूरी है कि भारत में मॉल्स की डिजाइनिंग और पोजिशनिंग यहां के उपभोक्ताओं की जरूरतों के हिसाब से की जाए। इसके लिए औसत भारतीय की कल्चर, सामाजिक व्यवहार और खूबियों को ध्यान में रखना होता है। उपभोक्ताओं के अनुकूल रवैया अपनाने से फुटफॉल में वृद्धि होती हैं, जिसका लाभ डेवलपर और रिटेलर-दोनों को मिलता है।

भी उसी नजरिए से तय किए जाते हैं, जहां उन्हें लगाना या डिसप्ले करना होता है। इसी तरह टीवी या प्रिंट मीडिया के विज्ञापनों को भी लोकेशनों के अनुरूप रूप दिया जाता है। कहने का मतलब यह कि मॉल की पूरी फंक्शनिंग उसकी पोजिशनिंग का संदेश देती है।

एक और तैयार महत्वपूर्ण चीज जो डेवलपरों के ध्यान में रखने की जरूरत होती है, वो यह कि जब कोई मॉल इंटरनेशनल फॉर्मेटों से प्रेरित हो, तो भारतीय उपभोक्ताओं को ध्यान में रखना चाहिए। बहुत जरूरी है कि भारत में मॉल्स की डिजाइनिंग और पोजिशनिंग यहां के उपभोक्ताओं की जरूरतों के हिसाब से की जाए। इसके लिए औसत भारतीय की कल्चर, सामाजिक व्यवहार और खूबियों को ध्यान में रखना होता है। उदाहरण के तौर पर भारत में मॉल अधिकांश तौर पर कम्यूनिटी सेंटरों या समुदाय केंद्रों की भूमिका निभाते हैं। ये वो स्थल हैं जहां पूरा परिवार अपना समय बिताने के लिए इकट्ठा आता है। लिहाजा मॉल को कॉरपोरेट नौकरी करने वाले पति, गृहिणी और बच्चों-सभी की जरूरतें पूरी करनी होती हैं। वहां खिलौने वाले स्टोर भी होने चाहिए, गेमिंग सेंटर भी होना चाहिए, एंटरटेनमेंट सेंटर भी होना चाहिए, फूड कोर्ट व जनरल स्टोर भी होने चाहिए। ताकि हर किसी की, और हर तरह की जरूरत पूरी हो सके। कहने का मतलब यह कि भारतीय उपभोक्ता के अनुकूल रवैया अपनाने से फुटफॉल में वृद्धि सुनिश्चित होती है, जो अंततः डेवलपर और रिटेलर दोनों के लिए फायदेमंद होती है। विभिन्न अध्ययनों से यह साबित हो चुका है कि खरीद के अधिकांश निर्णय लोग स्टोर में पहुंचने पर ही करते हैं। और मॉल मैनेजमेंट ग्राहक की इस आदत का खूब फायदा उठाते हैं। इसका लाभ रिटेलरों की पोजिशनिंग और लोकेशन तय करने में भी मिल सकता है।

मॉल में एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष कॉमन एरिए का है। अगर मॉल की योजना अच्छी तरह सुनियोजित ढंग से बनाई गई हो और उसका निर्माण अच्छी तरह किया गया हो, तो कैम-दरें बहुत कम रखी जा सकती हैं। कम से कम अगले दस वर्ष तक इस मुद्दे पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत नहीं पड़ती। इसलिए शुरुआती चरणों में कैम की जिम्मेदारी डेवलपर को ही लेनी चाहिए। इससे रिटेलरों को यह संदेश भी मिलता है कि मॉल की सफलता में डेवलपर भी उतनी ही दिलचस्पी ले रहे हैं, जितनी कि वे लेते हैं। डेवलपरों की एक आम गलती यह रहती है कि वे झटपट स्पेस बेच कर प्रोजेक्ट से हट जाना चाहते हैं, यह नहीं होना चाहिए। सफल मॉल, डेवलपर की जिम्मेदारी है। वो इससे जुड़ा रहता है तो मॉल की पहचान तो बनती ही है, रिटेलरों को भी खुशी होती है।

मॉल का रि-ओरिएंटेशन

लेकिन तब क्या हो अगर डेवलपर पहले ही गलतियां कर चुका हो? यानी उसने प्लानिंग स्टेज पर ही किसी मॉल कंसलटेंट को साथ न लिया हो। ऐसी स्थिति में मॉल के रि-ओरिएंटेशन यानी मॉल को नया रूप-रंग व ले-आउट देने की बात आती है। हालांकि यह प्रक्रिया प्लानिंग के दौर के मुकाबले ज्यादा महंगी पड़ती है, लेकिन रि-ओरिएंटेशन से एक फेल हो रहा प्रोजेक्ट डूबने से बच जाता है। इस प्रक्रिया की शुरुआत इस समझ के साथ होती है कि मॉल बिल्डर सुनिश्चित करता है कि मॉल कम से कम 10 साल तक बना रहेगा, और सभी रिटेल बिजनेसों को फायदा होगा। हालांकि ऐसी स्थिति में किसी के कुछ करने की ज्यादा गुंजाइश नहीं रहती है, लेकिन अनुभवी और प्रोफेशनल मॉल रि-ओरिएंटेशन विशेषज्ञों की मदद से मॉल को तब भी बचाया जा सकता है। फिर भी मॉल के रि-ओरिएंटेशन से पहले इस बात की अच्छी तरह पड़ताल कर लेनी चाहिए कि सिस्टम में क्या गलत था, या क्या कमियां थीं, जिसकी वजह से मॉल सफल नहीं हो पा रहा था। हालांकि किसी मॉल को असफल ठहराने या मानने के अलग-अलग

पैमाने हो सकते हैं। लेकिन किसी भी शॉपिंग कंप्लैक्स की असफलता का मुख्य कारण वहां फुटफॉल में कमी आना या कमी होना होता है।

देश में कुछ ऐसे उदाहरण मौजूद हैं, जहां रि-ओरिएंटेशन से मॉल डेवलपरों और उसमें मौजूद रिटेलरों को मदद मिली है। वर्तमान की बात करें तो मुंबई में नेप्चून ग्रुप के मैग्नेट मॉल का रि-ओरिएंटेशन किया जा रहा है और यह काम एडवाइजरी कंपनी बियोंड स्क्वॉयरफीट (Beyond Squarefeet) कर रही है। इस केस में समूचे मॉल की रि-डिजाइनिंग और रि-स्ट्रक्चरिंग की गई है। साथ ही रिटेल-मिक्स में फेरबदल किया गया है। पूरी योजना उपभोक्ता को ध्यान में रख कर तैयार की गई है। उपभोक्ता को अधिक पैसे खर्च करने के प्रेरक उपाय किए जा रहे हैं। मॉल की लोकेशन और डिजाइन सयाने उपभोक्ताओं के लिए पूर्ण शॉपिंग एक्सपीरिएंस प्रदान करने का परफेक्ट माहौल पेश करते हैं। गौरतलब है कि यह मॉल बांडुप में लोअर पवई के एलबीएस मार्ग पर, 10,56000 वर्गफुट में फैला हुआ है। इसमें 10 स्क्रीन वाला मल्टीप्लैक्स है और मुंबई का सबसे बड़ा फूड कोर्ट भी यहीं है।

मुंबई में मैग्नेट ऐसा पहला मॉल होगा जहां 250,000 वर्गफुट का विशाल फ्लोर एरिया, 100 प्रतिशत पॉवर बैकअप और मल्टीलैवल कार पार्किंग सुविधाएं होंगी। यह मॉल 2010 के मध्य में खुलने की संभावना है। इस मॉल में जर्मनी की कैश एंड कैरी हाइपरमार्केट चेन मेट्रो (Metro) पहले से ही मौजूद है। इतने बड़े पैमाने का मैग्नेट मॉल पहला प्रोजेक्ट है। बियोंड स्क्वॉयरफीट मॉल के स्पेस की मार्केटिंग में भी नेप्चून ग्रुप को सलाह देगा।

यह बात अच्छी तरह समझने की है कि मॉल का रि-ओरिएंटेशन उसकी सफलता की गारंटी तो नहीं होता, लेकिन अगर यह काम सिस्टमैटिक ढंग से किया जाए, तो उसके सफल होने के अच्छे अवसर होते हैं। यह प्रोसेस नया मॉल निर्माण करने की तुलना में सस्ता भी पड़ता है। रि-ओरिएंटेशन से फुटफॉल में वृद्धि लाई जा सकती है, बेहतर ब्रांड या रिटेलर लाए जा सकते हैं, बेहतर डिजाइनिंग की जा सकती है। नतीजतन बेहतर रिटर्न प्राप्त किए जा सकते हैं, जिससे बेहतर वैल्यू हो सकती है। कुशल मॉल मैनेजमेंट के लिए सभी महत्वपूर्ण पहलुओं पर व्यक्तिगत रूप से या अलग-अलग फोकस करने की जरूरत होती है। मसलन क्षेत्र की जनसंख्या वर्गीकरण का अध्ययन करना, मॉल का कंसेप्चुलाइजेशन और डिजाइनिंग,

मॉल का रि-ओरिएंटेशन उसकी सफलता की गारंटी नहीं होता। लेकिन सिस्टमैटिक ढंग से किया जाए, तो उसके सफल होने के अच्छे अवसर होते हैं। इससे फुटफॉल में वृद्धि लाई जा सकती है, बेहतर ब्रांड लाए जा सकते हैं, बेहतर डिजाइनिंग की जा सकती है। नतीजतन बेहतर रिटर्न प्राप्त किए जा सकते हैं।

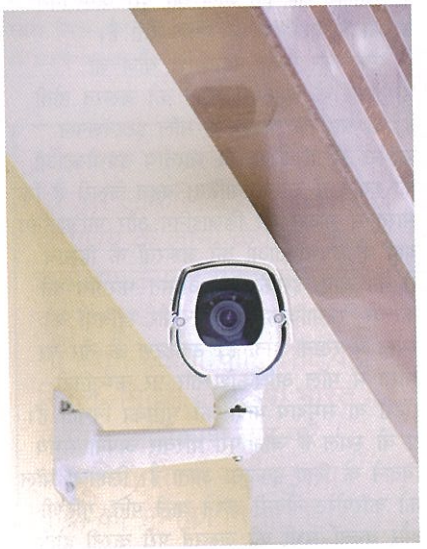

जोनिंग, ले-आउट, फैसिलिटी मैनेजमेंट, लीजिंग तथा अंततः मार्केटिंग व प्रमोशन करना।

भावी संभावनाएं

आने वाले वर्षों में इस सेक्टर में काफी मजबूती दिखाई देती है। जहां तक मेरा आकलन है, मुझे छोटे मॉल्स के लिए कोई गुंजाइश नहीं दिखती। मेरा मानना है कि 200,000 वर्गफुट से कम एरिए वाले मॉल्स को बने रहने में काफी मुश्किल रहेगी। इन छोटे मॉल्स को बड़े खिलाड़ी खरीद लेंगे। और जिनका कोई खरीददार नहीं होगा, वे छोटे रिटेल सेंटरों या कमर्शियल प्रॉपर्टियों में बदल जाएंगे।

2010 वर्ष में उपभोक्ता के लिए भी कई सरप्राइजेज आएंगे। उन्हें ऐसे मॉल देखने को मिलेंगे, जो काफी बड़े होंगे। वर्तमान में

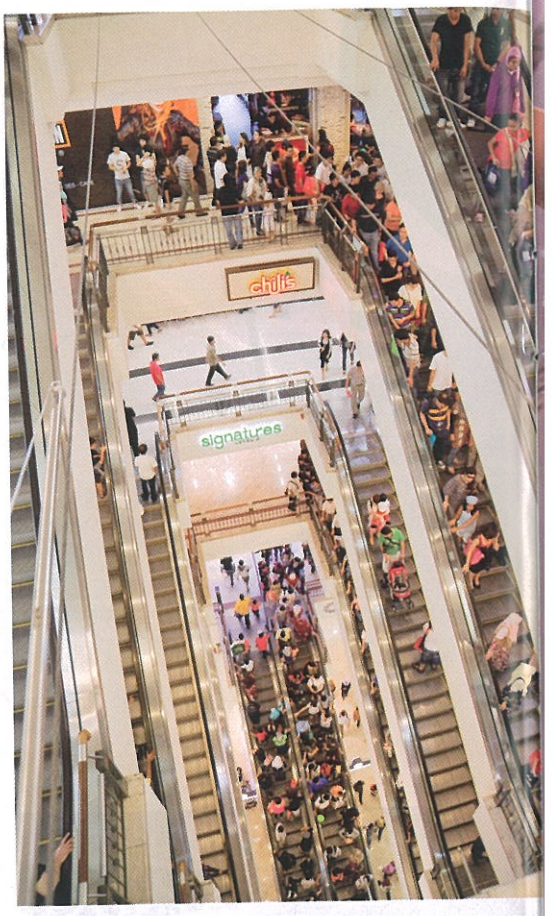

800,000 वर्गफुट से ले कर 10,00,000 वर्गफुट तक के 10 से भी ज्यादा मॉल निर्माण पूरा होने के करीब हैं। इनमें चेन्नई में एक्सप्रेस एवेन्यू मॉल, मुंबई में मैग्नेट मॉल, दिल्ली में सेंट्रम मॉल, कोचीन में लुलु मॉल तथा बंगलौर में मंत्री मॉल जैसे प्रोजेक्ट शामिल हैं। इसके अलावा बंगलौर का प्रेस्टीज ग्रुप भी चेन्नई, हैदराबाद व मैसूर में कुछ बड़े मॉल लांच करने की तैयारी में हैं। ये सभी मॉल 800,000 वर्गफुट से भी ज्यादा एरिया वाले होंगे।

आने वाले साल में रिटेल व रिटेल रियल एस्टेट बिजनेस में कई नए फॉर्मेट देखने को मिलेंगे। इन बड़ी इमारतों के निर्माण में बहुत तकनीकी व क्रिएटिव इंजीनियरिंग से काम लिया जा रहा है। इन मॉल्स के लिए छोटी से छोटी डिटेल पर विचार किया गया। कोशिश की गई है कि ये मॉल उपभोक्ता के लिए महज रिटेल डेस्टिनेशन न बन कर कंप्लीट एक्सपीरिएंस डेस्टिनेशन बने। कुल मिला कर मेरा मानना है कि 2010 का साल भारतीय रिटेल सेक्टर को उसका खोया रोमांच लौटा देगा। ■